

# शासकीय स्कूलों का विलय और बन्द होना

अरविंद सरदाना और प्रियंता घोष

यह लेख मध्य प्रदेश की सरकारी स्कूल व्यवस्था में चल रहे संकट की बात करता है। बड़ी संख्या में शासकीय प्राथमिक व माध्यमिक शालाएँ बन्द की जा रही हैं। रिक्त स्थानों पर शिक्षकों की नियुक्ति नहीं हो पा रही है और आम आदमी का सरकारी स्कूलों पर से भरोसा कम होता जा रहा है। विद्यार्थियों की संख्या घटने के कारण वर्ष 2015-16 से 2024-25 के बीच 31,609 प्राथमिक और मिडिल स्कूल बन्द कर दिए गए। कई स्कूलों में ज़रूरत से ज़्यादा शिक्षक हैं, जबकि कई स्कूलों में शिक्षक ही नहीं हैं। इस संकट की ओर ध्यान खींचने के साथ-साथ यह लेख संकट से निपटने के लिए कुछ सुझाव भी प्रस्तुत करता है।

करीब दो साल पहले हमारी एक शिक्षक मित्र को यह बताया गया कि वे 'अतिरिक्त शिक्षक' बन गई हैं। हैरानी की बात यह थी कि जिस प्राथमिक स्कूल में वे पढ़ाती थीं, वहाँ पहले से ही दो शिक्षक थे और स्कूल बन्द होने की स्थिति में था। उसी दौरान एक अन्य शिक्षक ने अपने सम्पर्कों के बल पर उसी स्कूल में तबादला करवा लिया और हमारी मित्र को 'अतिरिक्त' बना दिया गया।

यह स्कूल शहर के पास, सड़क किनारे स्थित था, इसलिए वहाँ पोस्टिंग पाना लोगों के लिए आकर्षक माना जाता है। यह घटना दिखाती है कि किस तरह पैसे और प्रभाव के

आधार पर तबादले किए जाते हैं, जबकि बच्चों और स्कूलों की ज़रूरतों को अक्सर नज़रअन्दाज़ कर दिया जाता है। पहले से ही परेशान शिक्षकों का मनोबल ऐसे फैसलों से और गिर जाता है।

सरकारी स्कूलों के बन्द होने और उनका आपस में विलय या 'मर्ज' करने की घटनाएँ उत्तर भारत के लगभग हर राज्य में देखी जा सकती हैं। जब स्कूल बन्द होते हैं तो बच्चों को दूर जाना पड़ता है, जिससे खासकर लड़कियों और गरीब परिवारों के बच्चों के स्कूल छोड़ने की आशंका बढ़ जाती है। शिक्षा का अधिकार कानून में बच्चों को घर के

पास स्कूल की व्यवस्था का प्रावधान है।

स्कूल मर्जर का असर स्कूल व्यवस्था पर साफ दिखता है। निजी स्कूलों, खासकर कम फीस वाले निजी स्कूलों की संख्या तेज़ी-से बढ़ी है। कुछ राज्य सरकारों ने इस बदलाव को गम्भीरता से लिया और सरकारी स्कूलों को मज़बूत करने की कोशिश की, लेकिन कई सरकारें इस स्थिति को नज़रअन्दाज़ करती रहीं। नतीजतन, सरकारी स्कूल धीरे-धीरे बहुत कमज़ोर होते चले गए।

### स्कूल बन्द और विलय

मध्य प्रदेश में सरकारी स्कूलों के बन्द

होने की खबरें लगातार समाचारों में आती रही हैं। राज्य सरकार ने इस रुझान से इनकार तो नहीं किया है, लेकिन इस बारे में कोई स्पष्ट और विस्तृत आँकड़े भी सार्वजनिक नहीं किए हैं। सरकार स्कूलों के बन्द होने को विलय (मर्जर) या युक्तियुक्तकरण (रेशनलाइज़ेशन) कहती है, जिससे वास्तविक स्थिति स्पष्ट नहीं होती।

यह लेख मध्य प्रदेश पर केन्द्रित है। इसमें पिछले बीस वर्षों में विद्यार्थियों की संख्या घटने के कारणों और सरकारी नीतियों की भूमिका पर ध्यान दिया गया है। मध्य प्रदेश का अध्ययन इसलिए भी ज़रूरी है, क्योंकि यहाँ देश में सबसे ज़्यादा

**तालिका 1: चयनित वर्षों में मध्य प्रदेश में स्कूल श्रेणी के अनुसार सरकारी स्कूलों की संख्या**

| स्कूल श्रेणी                                | 2012-13         | 2015-16         | 2019-20       | 2021-22       | 2024-25       | अन्तर<br>2015-16 से<br>2024-25 |
|---------------------------------------------|-----------------|-----------------|---------------|---------------|---------------|--------------------------------|
| प्राथमिक<br>विद्यालय<br>कक्षा (1-5)         | 83,405          | 83,880          | 63,917        | 58,518        | 58,098        | -25,782                        |
| माध्यमिक<br>विद्यालय<br>कक्षा (6-8)         | 29,228          | 30,316          | 12,741        | 7,411         | 7,270         | -23,046                        |
| संयुक्त प्राथमिक<br>विद्यालय<br>कक्षा (1-8) | 154             | 139             | 13,336        | 17,344        | 17,358        | +17,219                        |
| <b>कुल</b>                                  | <b>1,12,787</b> | <b>1,14,335</b> | <b>89,994</b> | <b>83,134</b> | <b>82,726</b> | <b>-31,609</b>                 |

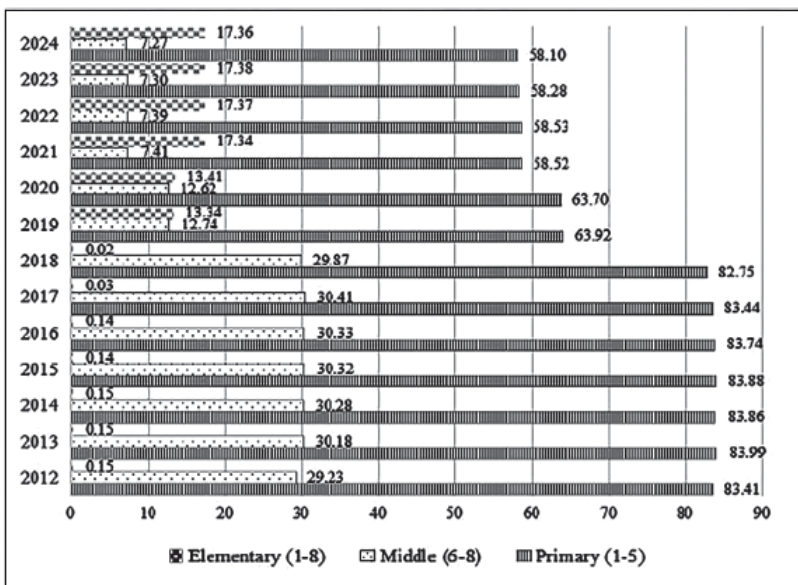
स्कूल बन्द किए गए हैं (नीति आयोग, 2021)।

मध्य प्रदेश के अलग-अलग वर्षों के आँकड़ों को देखा जाए तो सरकारी शिक्षा व्यवस्था में आए इस बड़े बदलाव की वास्तविक तस्वीर सामने आती है। तालिका-1 में पिछले दस वर्षों के प्राथमिक और मिडिल स्तर के सरकारी स्कूल हैं। दी गई तालिका से साफ दिखाई देता है कि प्राथमिक और मिडिल स्कूलों की संख्या में बड़ी गिरावट आई है।

मध्य प्रदेश के एक सामान्य गाँव में आम तौर पर एक प्राथमिक स्कूल

होता है। मिडिल स्कूल प्रायः किसी एक बड़े या नोडल गाँव में होते हैं जहाँ आसपास के कुछ गाँवों के बच्चे आते हैं। पहाड़ी या बिखरी हुई बसाहट वाले क्षेत्रों में एक ही गाँव के लिए एक से अधिक प्राथमिक स्कूल भी होते हैं, ताकि अलग-अलग टोलों के बच्चों तक शिक्षा पहुँच सके।

फ्लैश स्टैटिस्टिक्स के अनुसार, वर्ष 2005 से 2015 के बीच सरकारी प्राथमिक और मिडिल स्कूलों का अनुपात लगभग दो से तीन के बीच बना रहा। पहले के वर्षों में कक्षा 1 से 8 तक के संयुक्त (कम्पोज़िट)



स्रोत : UDISE+

चित्र-1: वर्ष 2012-13 से 2024-25 के दौरान स्कूल श्रेणी के अनुसार (हज़ारों में) सरकारी स्कूलों की संख्या में बदलाव का रुझान। स्रोत: UDISE+

प्रारम्भिक विद्यालय बहुत कम थे। उदाहरण के लिए, वर्ष 2015-16 में मध्य प्रदेश में 80 हजार से अधिक प्राथमिक स्कूल और लगभग 30 हजार मिडिल स्कूल थे, जबकि कक्षा 1 से 8 तक के संयुक्त स्कूल केवल 139 ही थे (तालिका-1)।

वर्ष 2015-16 तक शिक्षा का अधिकार कानून के दबाव के कारण सरकारी स्कूल व्यवस्था का विस्तार होता रहा। चित्र-1 से भी यह स्पष्ट होता है कि 2012-13 से 2015-16 के बीच प्राथमिक और मिडिल स्कूलों की संख्या में बढ़ोतरी हुई थी। इस अवधि में प्राथमिक और मिडिल स्कूलों की कुल संख्या 1,12,787 से बढ़कर 1,14,335 हो गई थी।

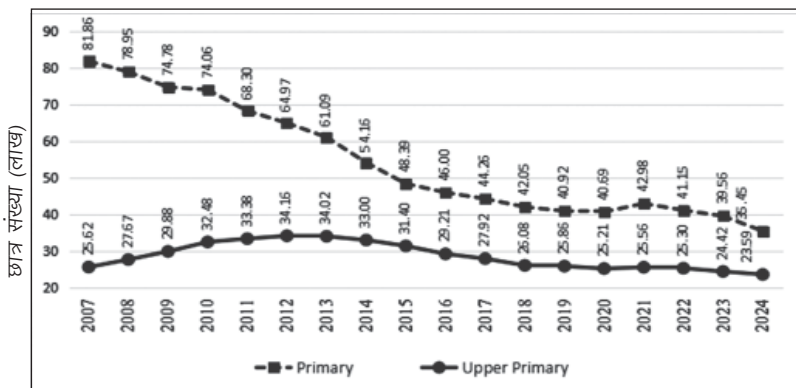
नामांकन में आ रही गिरावट का रुझान चित्र-2 में दिखाया गया है। प्राथमिक स्तर पर यह गिरावट वर्ष

2010 के बाद तेज़ हुई है। सरकारी स्कूलों में बच्चों की संख्या तेज़ी-से घटने के कारण कई स्कूल ऐसे हो गए जहाँ बहुत कम बच्चे पढ़ते हैं और स्कूल पूरी तरह उपयोग में नहीं आ पा रहे हैं।

और ऐसे छोटे स्कूलों की संख्या बढ़ती गई, जहाँ बच्चों की तुलना में शिक्षक अधिक हो गए। 50 या उससे कम बच्चों वाले स्कूलों का प्रतिशत वर्ष 2005-06 में 23.2 प्रतिशत था, जो बढ़कर 2015-16 में 41.9 प्रतिशत हो गया (चित्र-3)।

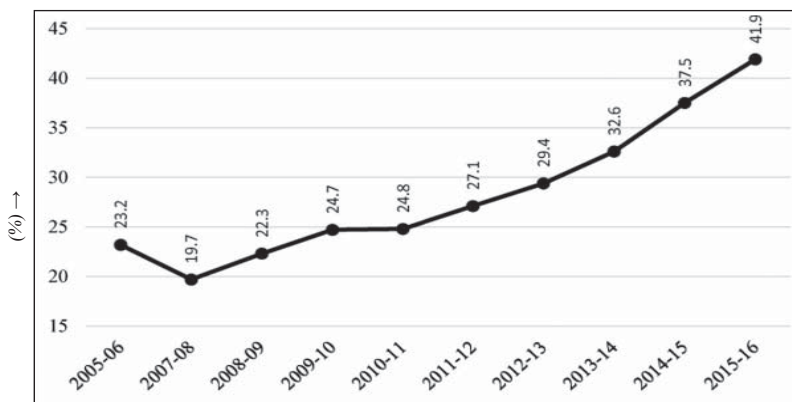
### प्रशासनिक युक्तियुक्तकरण

वर्ष 2019-20 से प्रशासन द्वारा स्कूलों के युक्तियुक्तकरण (रेशनलाइज़ेशन) की प्रक्रिया शुरू की गई। इसका असर तालिका-1 में दिखाई देता है - 2015-16 से 2024-25 के दस वर्षों



**चित्र-2:** सरकारी प्राथमिक और मिडिल स्कूलों में नामांकन (लाखों में)।

स्रोत: फ्लैश स्टैटिस्टिक्स (DISE), UDISE+



**चित्र-3:** 50 या उससे कम विद्यार्थियों वाले सरकारी स्कूलों का प्रतिशत।

स्रोत: फ्लैश स्टैटिस्टिक्स, DISE

के दौरान प्राथमिक स्कूलों की संख्या में 25,752 और मिडिल स्कूलों की संख्या में 23,046 की कमी आई।

इनमें से कई स्कूलों को आपस में मिलाकर 17,219 नए संयुक्त स्कूल (कक्षा 1 से 8) बनाए गए। पहले जहाँ नोडल गाँवों में प्राथमिक और मिडिल स्कूल अलग-अलग होते थे, अब उन्हें एक ही स्कूल में जोड़ दिया गया। लेकिन इसका कुल नतीजा यह रहा कि बच्चों की संख्या घटने के कारण 31,609 स्कूल वास्तव में बन्द हो गए। यह संख्या केवल प्रशासनिक पुनर्गठन नहीं बल्कि सार्वजनिक शिक्षा के सिकुड़ने का संकेत है।

स्कूलों की संख्या में आई इस गिरावट का बड़ा हिस्सा केवल एक-दो वर्ष में हुआ, यानी 2018-19 और 2019-20 के बीच (चित्र-1)।

### सरकारी स्कूलों की बदलती सामाजिक संरचना (2000-2010)

इस सदी के पहले दशक में मध्य प्रदेश में निजी स्कूलों की ओर झुकाव तब शुरू हुआ, जब साधन सम्पन्न परिवारों और ऊँची जातियों के लोग सरकारी स्कूलों से निकलकर निजी स्कूलों में जाने लगे।

वर्ष 1995-96 में सबसे अधिक आय वाले वर्ग (सर्वोच्च 20 प्रतिशत) के 17.6 प्रतिशत बच्चे निजी स्कूलों में पढ़ते थे। यह अनुपात बढ़कर 2007-08 में 49.7 प्रतिशत हो गया था। यानी शिक्षा का अधिकार कानून लागू होने से पहले ही यह बदलाव काफी तेज़ हो चुका था (चित्र-4)। हालाँकि सबसे कम आय वाले वर्ग के बच्चों में भी निजी स्कूलों की ओर थोड़ा रुझान दिखाई देता है, लेकिन

उनकी संख्या में बढ़ोतरी बहुत सीमित रही।

इसी पहले दशक में सरकारी स्कूलों में बच्चों को आकर्षित करने के लिए मुफ्त पाठ्यपुस्तकें, साइकिल और मध्याह्न भोजन (MDM) जैसी सुविधाएँ शुरू की गईं। इसके साथ ही, बिना ज़्यादा चर्चा के, कम फीस वाले निजी स्कूलों को बढ़ावा देने की एक समानान्तर प्रक्रिया भी चलती रही। जैसे, मध्य प्रदेश में निजी स्कूल खोलने से जुड़े नियम और नियंत्रण लगभग खत्म कर दिए गए (लैक्लर्क, 2003)।

जब लगभग 2010 के आसपास शिक्षा का अधिकार अधिनियम और उसके राज्य स्तरीय नियम लागू हुए, तब सरकारी स्कूलों में पढ़ने वाले अधिकांश बच्चे अनुसूचित जाति (SC), अनुसूचित जनजाति (ST), अन्य पिछड़ा वर्ग (OBC) और बालिकाएँ

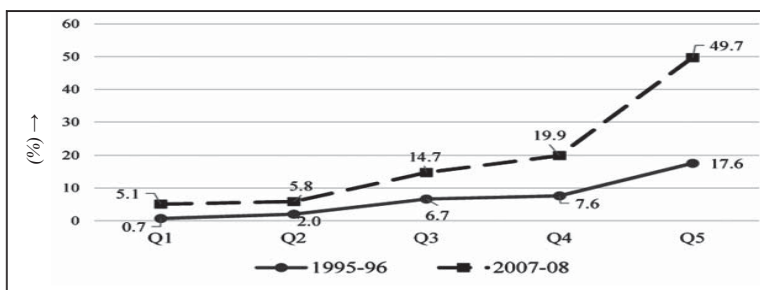
थीं, जबकि अधिकतर शिक्षक ऊँची जातियों से थे।

- 89.2 प्रतिशत अनुसूचित जनजाति के बच्चे,
  - 82.2 प्रतिशत अनुसूचित जाति के बच्चे,
  - 71.8 प्रतिशत अन्य पिछड़ा वर्ग के बच्चे, और
  - 52.2 प्रतिशत सामान्य वर्ग के बच्चे
- राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण (NSS) के 2007-08 के आँकड़ों के अनुसार, सरकारी स्कूलों में नामांकित हैं।

### दूसरा दशक: 2010 के बाद छात्रों का सरकारी स्कूलों से पलायन

2010 के बाद राज्य सरकार की निष्क्रियता के चलते सरकारी स्कूलों से बच्चों का निकलना और तेज़ हुआ।

इस सदी के पहले दशक में प्रशासन ने बच्चों का नामांकन बढ़ाने



**स्रोत : एनएसएस (विभिन्न चरणों) के आँकड़ों के आधार पर की गई गणना**

**चित्र-4:** Q1 से Q5 का मतलब आय के पाँच बराबर हिस्से (Quintiles - क्विंटाइल) है। इसमें परिवारों को सबसे कम (Q1) से लेकर सबसे ज़्यादा (Q5) आय वाले समूहों में बाँटा गया है। ग्राफ में आय वर्ग के अनुसार प्राथमिक स्तर पर निजी स्कूलों में पढ़ने वाले बच्चों का 1995-1996 एवं 2007-2008 का प्रतिशत दिखाया गया है।

के लिए अभियान चलाए थे और सर्व शिक्षा अभियान (SSA) की राशि का प्रभावी उपयोग किया गया था। लेकिन 2010 के बाद, जब बड़े पैमाने पर बच्चों के स्कूल छोड़ने के साफ संकेत दिखने लगे, तब न तो कोई नया अभियान चलाया गया और न ही लोगों का भरोसा दोबारा जीतने के लिए कोई ठोस प्रशासनिक कदम उठाए गए।

### प्रशासनिक निष्क्रियता

- गाँवों में कम फीस वाले निजी स्कूलों द्वारा सरकारी स्कूलों के बच्चों को अपने यहाँ खींच ले जाने पर कोई रोक नहीं लगाई गई।
- प्रधानाध्यापकों और प्राचार्यों की सही नियुक्ति नहीं की गई और न ही राजनीतिक हस्तक्षेप को रोकने का कोई मज़बूत सन्देश दिया गया।
- शिक्षकों के अव्यावहारिक तबादलों और पढ़ाने में लापरवाही पर कोई प्रभावी नियंत्रण नहीं रखा गया।
- शिक्षकों को बार-बार गैर-शैक्षणिक कामों में लगाए जाने से यह संकेत मिला कि पढ़ाने से ज़्यादा महत्व दफ़्तर के कामों को दिया जा रहा है।
- सरकारी स्कूलों और शिक्षकों के अच्छे काम को मान्यता नहीं मिली।
- स्कूलों की इमारत और सुविधाओं (शौचालय, पीने-का-पानी और बिजली) की लगातार अनदेखी ने

बच्चों के स्कूल आने और शिक्षकों के मनोबल, दोनों को बहुत प्रभावित किया।

- वर्ष 2015-16 में उपलब्ध कक्षाओं की तुलना में लगभग 9 प्रतिशत अतिरिक्त कक्षाओं की ज़रूरत थी, जबकि 23 प्रतिशत कक्षाओं को मरम्मत की आवश्यकता बताई गई थी। इसके अलावा 64 प्रतिशत स्कूलों में चारदीवारी नहीं थी और 88 प्रतिशत स्कूलों में बिजली की सुविधा नहीं थी (बोस एवं अन्य, 2020; एनडीटीवी में अनुराग द्वारी की रिपोर्ट, 2025)।

स्थिति तब और खराब हुई जब स्कूल प्रशासन ने खुले तौर पर शिक्षकों को ही पढ़ाई न कराने और बच्चों के स्कूल छोड़ने के लिए ज़िम्मेदार ठहराना शुरू कर दिया। ऐसा लगने लगा जैसे स्कूल प्रशासन की खुद कोई भूमिका ही नहीं है – न शिक्षकों की पोस्टिंग में, न स्कूलों की निगरानी में।

शिक्षकों को 'दोषी' बताने की यह सोच, कुछ बदहाल स्कूलों के उदाहरणों के ज़रिए जनता के बीच और भी मज़बूत हो गई। चूँकि सरकारी शिक्षकों का वेतन निजी स्कूलों के शिक्षकों से कहीं अधिक होता है, इसलिए यह तर्क दिया जाने लगा कि शिक्षकों का नैतिक स्तर गिर गया है और स्कूल खराब हो गए हैं। इस पूरी बहस में स्कूल प्रशासन लगभग अदृश्य बना रहा। यह सच है

कि कुछ शिक्षक अपने दायित्वों का पालन नहीं करते, लेकिन जब नियमों का खुलेआम उल्लंघन हो, निगरानी व्यवस्था कमजोर हो और प्रधानाध्यापक रोज़मर्रा के काम भी ठीक से न करा पाएँ, तो स्कूलों का बिगड़ना स्वाभाविक है।

शिक्षकों को दोषी ठहराना आसान था, लेकिन प्रशासन ने समुदाय से संवाद करने, उनकी शिकायतें सुनने और स्कूलों को बेहतर बनाने के लिए कोई गम्भीर प्रयास नहीं किया। इस दोषारोपण की प्रक्रिया में चन्द बदहाल सरकारी स्कूलों का उदाहरण देकर खुद प्रशासन ने ही अपनी बदहाली की बात मज़बूत कर दी।

इसका नतीजा यह हुआ कि कहीं-कहीं स्कूलों में ईमानदार शिक्षक इस बदलाव को रोकने के लिए पूरी मेहनत से जूझते रहे। वहीं कुछ शिक्षक राजनीतिक संरक्षण लेकर अपनी स्थिति बचाने में लग गए और जो शिक्षक राजनीतिक तौर से प्रभावशाली थे, वे बेझिझक पढ़ाने की ज़िम्मेदारी से दूर रहे। और कुछ ने तो अपने परिवार के सदस्यों को निजी स्कूल खोलने में मदद भी की।

प्रशासन की इस निष्क्रियता से जनता का भरोसा टूटा और इसी के कारण बच्चे सरकारी स्कूलों से बाहर जाने लगे। इसके बाद स्थिति ऐसी हो गई कि कुछ बच्चों का बाहर जाना एक बाढ़ में तबदील हो गया और अन्य बच्चों के बाहर जाने की वजह

बनता गया (हिर्शमैन, 1970)। राजनीतिक नेतृत्व ने शिक्षकों को दोषी ठहराते हुए इस बदलाव को 'लोगों की निजी स्कूलों के प्रति पसन्द' का नतीजा बता दिया। इस तरह सरकारी स्कूलों से बच्चों के बाहर जाने की असली वजह — भरोसे की कमी — को 'जनता की पसन्द बदलने' के तर्क में दबा दिया गया। और शिक्षा का अधिकार (RTE) कानून की मूल भावना लगभग समाप्त कर दी गई।

### प्रशासन में दो मुँह वाली व्यवस्था

सरकारी स्कूलों से बच्चों के निजी स्कूलों में जाने के अलावा सरकारी शिक्षा व्यवस्था में भरोसे की दोहरी हानि हुई। एक ओर बहुत छोटे स्कूल बनते गए, जहाँ बच्चों की संख्या कम थी लेकिन शिक्षक अधिक थे। दूसरी ओर कई ऐसे स्कूल थे, जहाँ बच्चों की संख्या पर्याप्त थी, लेकिन शिक्षकों की भारी कमी थी। तालिका-2 में मध्य प्रदेश के प्राथमिक और मिडिल स्कूलों में शिक्षक कमी और शिक्षक अधिकता वाले स्कूलों का प्रतिशत दिखाया गया है।

तालिका से साफ पता चलता है कि वर्ष 2015-16 में लगभग 30 प्रतिशत प्राथमिक स्कूलों में शिक्षकों की कमी थी। मिडिल स्कूलों की स्थिति और भी गम्भीर थी, जहाँ 73.6 प्रतिशत स्कूलों में ज़रूरी संख्या में शिक्षक नहीं थे।

**तालिका 2:** मध्य प्रदेश में शिक्षक कमी और शिक्षक अधिकता वाले स्कूल (प्रतिशत में)।

स्रोत: UDISE+ माइक्रो डेटा के आधार पर की गई गणना

| स्कूल श्रेणी                            | 2015-16 | 2018-19 | 2021-22 | 2024-25 |
|-----------------------------------------|---------|---------|---------|---------|
| <b>शिक्षक कमी वाले सरकारी स्कूल (%)</b> |         |         |         |         |
| प्राथमिक विद्यालय कक्षा (1-5)           | 30.05   | 25.63   | 32.93   | 16.34   |
| मध्यमिक विद्यालय कक्षा (6-8)            | 73.63   | 72.49   | 78.28   | 34.80   |
| <b>शिक्षक अधिकता वाले सरकारी स्कूल</b>  |         |         |         |         |
| प्राथमिक विद्यालय कक्षा (1-5)           | 16.21   | 14.03   | 8.55    | 10.99   |
| मध्यमिक विद्यालय कक्षा (6-8)            | 8.44    | 7.77    | 6.25    | 13.36   |

स्कूल प्रशासन ने इन्हें नजरअन्दाज़ कर दिया। शहरी इलाकों और अपेक्षाकृत समृद्ध जिलों में मौजूद छोटे स्कूलों और अतिरिक्त शिक्षकों पर होने वाली सार्वजनिक चर्चा के शोर में, दूरदराज़ गाँवों और पिछड़े जिलों की समस्याएँ पूरी तरह दब गईं। छोटे स्कूलों में अतिरिक्त शिक्षकों की चर्चा ने उन स्कूलों की आवाज़ को अदृश्य कर दिया, जहाँ बच्चे तो पर्याप्त थे लेकिन शिक्षक नहीं थे।

RTE से जुड़े अध्ययन में हमने मध्य प्रदेश के दो बिल्कुल अलग जिले, सिंगरौली और इन्दौर की तुलना की थी। सिंगरौली राज्य का एक दूरस्थ और पिछड़ा जिला है, जबकि इन्दौर

अपेक्षाकृत शहरी और समृद्ध है। इन्दौर में सरकारी स्कूलों में छात्र-शिक्षक अनुपात (PTR) का औसत 22 और मध्य मान 20 था। वहीं सिंगरौली में प्राथमिक व मिडिल स्कूलों का मध्य मान PTR 40 और औसत PTR 51 था।

स्कूलों के विलय और बन्द करने की प्रक्रिया के ज़रिए प्रशासन ने अतिरिक्त शिक्षकों को उन स्कूलों में भेजने की कोशिश की, जहाँ शिक्षकों की ज़रूरत थी। कुछ हद तक यह किया भी गया, खासकर प्राथमिक और मिडिल स्कूलों को मिलाकर लगभग 17 हजार संयुक्त स्कूल (कक्षा 1-8) बनाए गए। लेकिन इतने

बड़े पैमाने पर सभी अतिरिक्त शिक्षकों का तबादला करना आसान नहीं था। इसका विरोध हुआ और फिर प्रशासन ने नियमों में बदलाव करके कस्बा या सड़क किनारे के स्कूलों में तबादला चाहने वाले शिक्षकों को 'समायोजित' करना शुरू कर दिया। तबादलों और संरक्षण की 'कीमत' और बढ़ गई। शिक्षा का अधिकार कानून सिर्फ कुल बच्चों और शिक्षकों की संख्या के अनुपात की बात नहीं करता; कानून में प्रति-कक्षा शिक्षकों की संख्या का भी ज़िक्र है।

जैसा कि शुरुआत में बताया गया, 18 बच्चों वाले छोटे-से प्राथमिक स्कूल में दो शिक्षकों के होते हुए भी एक अतिरिक्त शिक्षक की नियुक्ति कर देना, इस बात का उदाहरण है कि 'सब कुछ चलता है'। इस कारण

शिक्षक अधिकता वाले स्कूलों से शिक्षक कमी वाले स्कूलों में तबादले सीमित ही रह गए, अतिरिक्त शिक्षक वाले स्कूल और कमी वाले स्कूल, दोनों अपने संकट से जूझते रहे। यही 'दो मुँह वाला संकट' है।

तालिका-3 से यह स्पष्ट होता है कि शिक्षकों के वितरण में शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों के बीच लगातार असमानता बनी हुई है। शिक्षक अधिकता वाले स्कूल मुख्य रूप से शहरी क्षेत्रों जबकि शिक्षकों की कमी वाले स्कूल ग्रामीण क्षेत्रों में केन्द्रित हैं।

ग्रामीण स्कूलों में शिक्षकों की कुल कमी 2018-19 में 36.26 प्रतिशत थी जो बढ़कर 2021-22 में 46.95 प्रतिशत तक पहुँची। उसी अन्तराल में जबकि शहरी स्कूलों में शिक्षकों की

**तालिका-3:** मध्य प्रदेश के ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में शिक्षक अधिकता और शिक्षक कमी वाले सरकारी स्कूल (प्रतिशत में)।

स्रोत: UDISE+ माइक्रो डेटा के आधार पर की गई गणना

| क्षेत्र                                | 2015-16 | 2018-19 | 2021-22 | 2024-25 |
|----------------------------------------|---------|---------|---------|---------|
| <b>शिक्षक अधिकता वाले सरकारी स्कूल</b> |         |         |         |         |
| ग्रामीण                                | 12.22   | 10.39   | 7.42    | 13.64   |
| शहरी                                   | 29.04   | 26.18   | 29.47   | 29.81   |
| <b>शिक्षक कमी वाले सरकारी स्कूल</b>    |         |         |         |         |
| ग्रामीण                                | 39.56   | 36.26   | 46.95   | 22.51   |
| शहरी                                   | 26.07   | 25.87   | 28.79   | 22.72   |

कमी 25.87 से बढ़कर 28.79 तक रही।

ऐसी ही स्थिति हमने दिल्ली के एक अध्ययन में भी देखी थी। दिल्ली के बाहरी शहरी इलाकों में, जहाँ कम आय वर्ग के लोग रहते हैं, वहाँ सरकारी स्कूल, जगह और शिक्षकों की भारी कमी से जूझ रहे थे (बोस एवं अन्य, 2021)।

नतीजा यह है कि कम फीस वाले निजी स्कूल ही लोगों के लिए तयशुदा विकल्प बनते गए।

जब तबादलों के ज़रिए शिक्षक अधिकता और शिक्षक कमी वाले स्कूलों के बीच की खाई नहीं भरी जा सकी, तब मध्य प्रदेश सरकार ने बड़े पैमाने पर अतिथि शिक्षकों की नियुक्ति शुरू कर दी। वर्ष 2023 में राज्य सरकार ने बताया कि प्रदेश में 72 हजार अतिथि शिक्षक कार्यरत हैं, जो कुल शिक्षक संख्या का लगभग एक-तिहाई हैं। यह व्यवस्था अब केवल अस्थायी समाधान नहीं रही, बल्कि कम वेतन पर काम करने वाले संविदा शिक्षकों की एक पूरी नई फौज बन गई है।

एक गम्भीर उदाहरण के तौर पर, खरगौन ज़िले के झिरनिया आदिवासी विकासखण्ड में 66 प्राथमिक स्कूल ऐसे हैं जहाँ कोई भी नियमित शिक्षक नहीं है, और 146 स्कूल ऐसे हैं जहाँ केवल एक शिक्षक कार्यरत है। यह इस विकासखण्ड के कुल प्राथमिक

स्कूलों का 58.9 प्रतिशत है और ये सभी अतिथि शिक्षकों पर निर्भर हैं।

इस तरह शिक्षा व्यवस्था धीरे-धीरे फिर से अस्थायी और अनौपचारिक शिक्षण संसाधनों की ओर लौटती दिख रही है, जबकि शिक्षा का अधिकार (RTE) कानून का उद्देश्य ऐसी व्यवस्थाओं को समाप्त करना था।

### क्या स्थिरता आ पहुँची?

सरकारी स्कूलों में पढ़ने वाले बच्चों का कुल रुझान तालिका-4 में दिखाया गया है।

वर्ष 2012-13 में 66.60 प्रतिशत बच्चे सरकारी स्कूलों में पढ़ते थे, और यह घटते-घटते 2019-20 में 56.72 प्रतिशत रह गया। लेकिन इसके बाद यह गिरावट रुकती हुई दिखाई देती है। 2021-22 में यह प्रतिशत 59.71 और 2024-25 में 57.51 रहा। इससे संकेत मिलता है कि पहले जो तेज़ गिरावट थी, वह अब एक पटार पर पहुँच गई है और सरकारी स्कूलों में नामांकन फिलहाल अपेक्षाकृत स्थिर हैं।

इसके विपरीत, बिना सहायता प्राप्त निजी स्कूलों में पढ़ने वाले बच्चों का हिस्सा 32.29 प्रतिशत से बढ़कर 2019-20 में 42.69 प्रतिशत हो गया। इसके बाद इन स्कूलों में नामांकन में केवल हल्का उतार-चढ़ाव देखने को मिला और यह लगभग 40-42 प्रतिशत के आसपास

**तालिका-4: मध्य प्रदेश में स्कूल प्रबन्धन के अनुसार विद्यार्थियों का प्रतिशत।**

स्रोत: UDISE+

| स्कूल प्रबन्धन              | 2012-13 | 2015-16 | 2019-20 | 2021-22 | 2024-25 |
|-----------------------------|---------|---------|---------|---------|---------|
| सरकारी स्कूल                | 66.60   | 62.98   | 56.72   | 59.71   | 57.51   |
| सहायता प्राप्त निजी स्कूल   | 1.11    | 0.79    | 0.59    | 0.47    | 0.38    |
| बिना सहायता वाले निजी स्कूल | 32.29   | 36.23   | 42.69   | 39.82   | 42.11   |

स्थिर हो गया। यह स्थिरता आने के कुछ सम्भावित कारण हैं। बिना सहायता वाले निजी स्कूलों में फीस बहुत अधिक है और ग्रामीण व पिछड़े जिलों के कई अभिभावक यह वहन नहीं कर सकते। वर्ष 2025 की एनएसएस रिपोर्ट (भारत सरकार, 2025) के अनुसार, मध्य प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्रों में स्कूल शिक्षा पर पालकों द्वारा प्रति छात्र औसत खर्च सरकारी स्कूलों में 2,435 रुपए है, जबकि निजी स्कूलों में यह 18,099 रुपए है। इसलिए निजी स्कूल बड़े पैमाने पर ग्रामीण क्षेत्रों या पिछड़े जिलों में प्रवेश नहीं कर पाए हैं। वे समझते हैं कि कृषि से जुड़े जोखिमों और सीमान्त किसानों व मज़दूरों की कम आय के कारण ग्रामीण आय अस्थिर रहती है।

### मध्य प्रदेश के अनुभव से सीख

भरोसा बहाल करना है, तो शुरुआत उन क्षेत्रों से करनी होगी जहाँ अभाव है। इन इलाकों में माँग

तो मौजूद है, लेकिन शिक्षकों, कक्षाओं या स्कूल प्रशासन की व्यवस्था पर्याप्त नहीं है। यदि स्कूल-विशेष की इन समस्याओं का समाधान किया जाए, तो भरोसा बनेगा। मध्य प्रदेश के सन्दर्भ में, स्कूल प्रशासन को शिक्षकों को दोष देना बन्द करके, गाँव या स्थानीय स्तर पर बैठकें कर जनता की शिकायतों को सम्मानपूर्वक सुनना चाहिए।

ग्रामीण क्षेत्रों और पिछड़े जिलों में बड़ी संख्या में ऐसे स्कूल हैं जहाँ शिक्षकों की कमी और बुनियादी ढाँचे की समस्याएँ गम्भीर हैं। यह समझना ज़रूरी है कि मध्य प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्रों में सरकारी और निजी स्कूलों में नामांकन का अनुपात 75:25 है, जबकि शहरी क्षेत्रों में यह 40:60 है (भारत सरकार, 2025)। इसका अर्थ यह है कि यदि ग्रामीण मध्य प्रदेश में शिक्षकों की कमी और बुनियादी ढाँचे की समस्याओं को दूर किया जाए, तो व्यवस्था में भरोसा दोबारा बनाया जा सकता है। ग्रामीण मध्य प्रदेश में उच्च

विद्यालय स्तर पर 80.8 प्रतिशत छात्र सरकारी स्कूलों में पढ़ते हैं (भारत सरकार, 2025), जो दर्शाता है कि उच्चतर स्तर पर सरकारी स्कूलों में भरोसा काफी हद तक अभी भी बना हुआ है। इसलिए पहला कदम ग्रामीण क्षेत्रों और पिछड़े ज़िलों पर ध्यान देना होना चाहिए। ध्यान न दिया गया तो गम्भीर परिणाम हो सकते हैं, क्योंकि अन्ततः छात्र स्कूल छोड़ सकते हैं। सरकारी स्कूलों में पढ़ने वाले छात्रों को यह महसूस नहीं होना चाहिए कि वे एक दरकती व्यवस्था का हिस्सा हैं और आर्थिक मजबूरियों के कारण असहाय हैं।

ग्रामीण क्षेत्रों में ओबीसी समूहों की राजनीतिक दखल मज़बूत है और उनकी 'आवाज़' को व्यवस्था में बनाए रखना ज़रूरी है। इस बात को विभिन्न तरीकों से दोहराया गया है। एक ओर, हर्शमैन (1970) का तर्क है कि सार्वजनिक सेवाओं में मध्यम वर्ग की 'आवाज़' को बनाए रखना आवश्यक है क्योंकि वो ही व्यवस्था को चुनौती देते हैं, अन्यथा एक के बाद एक लोग बाहर निकलते जाएँगे और सार्वजनिक व्यवस्था ढह सकती है। इसी तरह, इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने शिव कुमार पाठक एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य (2015) के फैसले में सुझाव दिया कि उत्तर प्रदेश में सरकारी स्कूलों में सुधार का एक तरीका यह है कि सभी स्तरों के अधिकारियों को

मिलने वाला शिक्षा भत्ता इस शर्त के साथ जोड़ा जाए कि उनके बच्चे सरकारी स्कूलों में पढ़ें। इससे इन स्कूलों का प्रशासन बेहतर होगा, क्योंकि उनकी भागीदारी और हस्तक्षेप स्वाभाविक रूप से बढ़ेंगे।

हार्मा (2009) का मत है कि "अभिभावक एक बेहतर सरकारी व्यवस्था को प्राथमिकता देंगे, क्योंकि लगभग आधे लोग कम शुल्क वाले निजी स्कूलों का खर्च वहन नहीं कर सकते, और बाज़ार सार्वभौमिक व सामाजिक रूप से उचित स्तर की सेवाएँ उपलब्ध नहीं करा पाता। इसलिए प्राइवेट स्कूल के बाज़ार पर निर्भर रहने की बजाय जवाबदेही को मूल सिद्धान्त बनाकर सरकारी व्यवस्था में सुधार करना सामाजिक रूप से अधिक उपयुक्त है।" आज हाशिए के समूहों द्वारा कम शुल्क वाले निजी स्कूलों को चुनना दरअसल मजबूरी में लिया गया निर्णय है।

सरकार को यह स्पष्ट राजनीतिक संकेत देना होगा कि 'स्थानान्तरण उद्योग' पर रोक लगेगी। इसके साथ ही सक्षम लोगों को स्कूलों का प्राचार्य नियुक्त करना और उन्हें प्रशासनिक स्वतंत्रता देना आवश्यक है, ताकि स्कूलों का संचालन सुचारु हो सके और उन्हें अनावश्यक राजनीतिक हस्तक्षेप से सुरक्षा मिले।

मध्य प्रदेश को बड़ी संख्या में अतिथि शिक्षकों के सहारे स्कूल चलाने की प्रथा समाप्त करनी होगी,

जिन्हें अस्थायी मज़दूरों की तरह रखा जाता है। ग्रामीण क्षेत्रों पर विशेष ध्यान देते हुए नियमित शिक्षकों की भर्ती करना व्यवस्था में भरोसा बनाने के लिए अनिवार्य है। एक सुझाव यह भी है कि शिक्षकों की नियुक्ति किसी सामान्य कैडर की बजाय विशिष्ट स्कूलों में की जानी चाहिए, ताकि एक-दो साल में 'मनचाही' जगह पर स्थानान्तरण की प्रवृत्ति पर रोक लग सके।

मध्य प्रदेश की नीति का केन्द्र फिलहाल सीएम राइज़ स्कूलों (अब सांदीपनी स्कूल) पर है। अलबत्ता इनकी पहुँच सीमित है — कुल 369 स्कूल; और इनमें से भी कुछ अभी निर्माणाधीन हैं। इन्हें सभी सरकारी स्कूलों के विकल्प के रूप में प्रचारित

किया गया, लेकिन सरकार को प्राथमिकताओं में सन्तुलन बनाते हुए सामान्य सरकारी स्कूलों के सुधार पर ध्यान देना चाहिए। भरोसा बहाल करने के लिए, शीर्ष नौकरशाही और राजनीतिक वर्ग को इस मानसिकता से बाहर निकलना होगा कि सामान्य सरकारी स्कूली शिक्षा में सुधार सम्भव नहीं है, और निजीकरण ही इसका समाधान है। कई वर्ष पहले शिक्षक अक्सर कहते थे कि जिस तरह मध्य प्रदेश ने सार्वजनिक परिवहन व्यवस्था बन्द की, उसी दिशा में सार्वजनिक शिक्षा भी की जा रही है। तब यह बात अतिशयोक्ति लगती थी, लेकिन आज इसकी गूँज एक गम्भीर चेतावनी की तरह सुनाई देती है।

**अरविंद सरदाना:** सामाजिक विज्ञान समूह, एकलव्य से सम्बद्ध रहे हैं। लम्बे समय तक एनसीईआरटी एवं अन्य राज्यों की पाठ्यपुस्तकों की निर्माण प्रक्रियाओं से जुड़ाव रहा है। साथ ही, शिक्षक प्रशिक्षण के काम में सक्रिय रहे हैं।

**प्रियंता घोष:** अर्थशास्त्र के शिक्षक हैं और शिक्षा तथा सार्वजनिक नीतियों से जुड़े शोधकार्य कर चुके हैं।

**आभार:** डॉ. अमन मदान और टुलटुल बिस्वास के उपयोगी सुझावों के लिए उन्हें धन्यवाद देते हैं।

लेख में उल्लेखित आँकड़ों और जानकारी के स्रोत जानने के लिए नीचे दी गई लिंक देखें या दिए गए QR code को स्कैन करें।

<https://www.eklavya.in/resources/sandarbh-article-references/5738-sandarbh-166-school-marger>

